Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 13, Issue No. 1, April-2017, ISSN 2230-7540

मानस के प्रणेता तुलसी साहित्य का विश्लेषण

Dr. Pradeep Kumar Singh*

President- Hindi Department, Sathaye College (Mumbai Vidyapeeth) Mumbai - Maharashtra

सार* – *गोस्वामी तुलसीदास की काव्य प्रबंध योजना धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक आदि परिस्थितियों को स्पष्ट करने के प्रयोजन के रूप में वह अपनी जनचेतना को अभिव्यक्त करती है। तुलसी के सम्यक साहित्य के विषय में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी के अनुसार विश्लेषण करके बताया गया है कि ब्रहम के सत्स्वरूप की अभिव्यक्ति और प्रकृति को लेकर गोस्वामी तुलसीदास की भक्ति पद्धति निरन्तर चली है। उनके राम पूर्ण धर्म स्वरूप राम ही है। "राम के लीला क्षेत्र के भीतर धर्म के विविध रूपों का प्रकाश उन्होनें देखा है। धर्म का प्रकाश अर्थात् ब्रहम के सत्यरूप का प्रकाश इस रूपात्मक व्यक्त जगत के बीच होता है।"[1]

---------------------------------X---------------------------------

भगवान की इस स्थिति विधायिनी व्यक्त कला में हृदय न रमाकर, बाह्य जगत के नाना कर्मक्षेत्रों के बीच धर्म की दिव्य ज्योति के दर्शन करके जो आँख बन्द किए अपने अन्तःकरण के किसी कोने में ही ईश्वर को ढूँढा करते हैं उनके मार्ग से गोस्वामी तुलसीदास जी का भक्ति मार्ग बिल्कुल अलग है। उनका मार्ग ब्रह्म का स्वरूप पकड़कर धर्म की नानाभूमियों से होता हुआ जाता है। लोक में जब कभी भक्त धर्म के स्वरूप को तिरोहित या आच्छादित देखता है तब मानों भगवान उसकी दृष्टि से खुली हुई आँखों के सामने से ओझल हो जाते हैं, और वह वियोग की आकुलता फूल पड़ती है। तब मानों उसके प्रिय भगवान का मनोहर रूप सामने आ जाता है और वह पुलकित हो उठता है। हमारे यहाँ धर्म के अभ्युदय और निःश्रेय दोनों की सिद्धि की गई है। अतः किसी भी ढंग से मोक्ष का मार्ग धर्म के मार्ग से अलग बिल्कुल नहीं जा सकता, धर्म का विकास इस लोक के बीच हमारे परस्पर व्यवहार के भीतर होता है। हमारे परस्पर व्यवहारों का प्रेरक हमारा रागात्मक और भावात्मक हृदय होता है अतः हमारे जीवन की पूर्णता कर्म, धर्म, ज्ञान और भक्ति तीनों के समन्वय से ही संचालित होती है। साधना किसी भी प्रकार की हो साधक को वह पूरी सत्ता के साथ होनी चाहिए। धर्म भावना का उनकी भक्ति भावना से नित्य संवद्ध रहता है।

रामचरित मानस जैसे महाकाव्य में धर्म के ऊँची नीची विविध भूमियों की झाँकी हमें देखने को मिल जाती है। इस विविधता के कारण मन में तरह-तरह की शंकाएँ भी उठती हैं। जिस भरत जैसे लोक पावन चरित्र की दिव्य दीप्ति से हमारा हृदय जगमगा उठता है, उन्हीं के मुख से अपनी माता के लिए चुन-चुनकर कठोर वचन सुनाते देख कुछ लोग संदेह में भी पड़ जाते हैं। जो तुलसीदास लोक धर्म या शिष्ट मर्यादा का इतना ध्यान रखते थे उन्होने अपने सर्वोच्च पात्र के द्वारा उसका उल्लंघन कैसे कर आये हैं? उन पर दृष्टि डालकर यदि विचार किया जाए तो इसका उत्तर भी हमें यथाशीघ्र मिल जाता है। हम यह कहते आए हैं कि धर्म जितने अधिक विस्तृत जन समूह के सुख-दुख से संबंध रखने वाला होगा उतनी ही उच्च श्रेणी का वह माना जाएगा। धर्म के स्वरूप की उच्चता उसके लक्ष्य की व्यापकता के अनुसार समझी जाती है। जहाँ धर्म की पूजा में शुद्ध और व्यापक भावना का तिरस्कार दिखाई पड़ेगा वहाँ उत्कृष्ट पात्र के हृदय में भी रोस की अभिव्यक्ति स्वाभाविक द्य राम की पूजा धर्म स्वरूप है। क्योंकि अखिल विश्व की स्थिति उन्हीं से है, धर्म का विरोध और राम का विरोध दोनों एक ही बात है। जिसे राम प्रिय नहीं उसे धर्म बिल्कुल भी प्रिय नहीं है इसीलिए गोस्वामी तुलसीदास कहते हैं-

जाके प्रिय न राम वैदेही

सो चर तजिय कोटि बैरीसम, यद्यपि परम सनेही।''

इस प्रकार राम विरोध या धर्म विरोध का व्यापक दुष्परिणाम भी आगे आता है। राम-सीता के घर से निकलते ही सारी की सारी प्रजा शोकमग्न हो जाती है, दशरथ तो अपना प्राण ही त्याग देते हैं। भरत कोई संसार त्यागी विरक्त नहीं थे कि धर्म का ऐसा तिरस्कार और उस तिरस्कार का ऐसा कटु परिणाम देखकर भी क्रोध न करते या साधुता के प्रदर्शन के लिए उसे पी जाते। यदि वे अपनी माता को माता होने के कारण कटु वचन तक न कहते तो उनके राम प्रेम का उनके धर्म का उनकी मनोवृत्तियों के बीच का स्थान दिखाई पड़ता? जो

प्रिय का तिरस्कार और उसे पीड़ित देखकर क्षुब्ध न हो, उसके प्रेम का पता कहाँ लगाया जाएगा? भरत धर्म स्वरूप भगवान रामचन्द्र के सच्चे प्रेमी और अनन्य भक्त उपासक के रूप हमारे सामने रखे गए हैं अतः यदि काव्य दृष्टि से भी देखा जाए तो इस समर्थ के माध्यम से उनके राम प्रेम की जो व्यंजना हुई है। वह कहीं न कहीं अपना विशेष लक्ष्य रखती है। महाकाव्य या खण्डकाव्य के भीतर जहाँ धर्म पर क्रूर और निष्ठुर आघात सामने आता है। वहाँ श्रोता या पाठक का हृदय अन्यायी को उचित दण्ड के रूप में सही देखने के लिए छटपटाता है। यदि कथा वस्तु के भीतर से उसे दण्ड देने वाला पात्र मिल जाता है तो पाठक या श्रोता की भावना तुष्ट हो जाती है। इसके लिए भरत से बढ़कर और उपयुक्त पात्र भला कौन हो सकता था?

जिस भरत के लिए ही कैकेयी ने सारा अनर्थ खड़ा किया वे ही जब उसे धिक्कारते हैं तब कैकेयी को कितनी आत्मग्लानि हुई होगी, इसका भी अंदाजा सहज ही लगाया जा सकता है। ऐसी आत्मग्लानि उत्पन्न करने की पीड़ा कवि के मन में भी रही होगी। इस सोपान की आत्मग्लानि और किसी युक्ति से उत्पन्न नहीं की जा सकती थी। तुलसीदास जी राष्ट्र समाज और धर्म के अनन्य साधक थे। अपने समसामयिक समाज के विकास की समस्त शक्तियों का विश्लेषण तुलसीदास ने स्पष्ट किया है। मध्यकालीन परिवेश को देखते हुए तुलसीदास का जनचेतावनी संबंधी कार्य क्रांतिकारी उद्घोष ही माना जाएगा। तुलसीदास ने अपने युगजीवन की युगीन परिस्थितियों को साहित्य में सांस्कृतिक जनचेतना के रूप में स्थापित किया है। तुलसीदास के साहित्य में जनचेतना को सुस्पष्ट करने से पूर्व संस्कृति के परिभाषित स्वरूप का परिज्ञान भी अत्यावश्यक हैं। योगमूलक अनुभूतियों के भीतर से मनुष्य उस महान सत्य के व्यापक और परिपूर्ण रूप को क्रमशः प्राप्त करता जा रहा है, जिसे हम संस्कृति शब्द द्वारा अभिव्यक्त करते हैं। डॉ॰ भगीरथ मिश्र के मत में- ष्संस्कृति और कुछ नहीं, जीवन के सौन्दर्य निर्माण और विकास की प्रक्रिया है।’’[3]

डॉ0 देवराज के अनुसार भी यह कहा जा सकता है कि संस्कृति मानव जीवन के सर्वग्राहय आत्मिक जीवन क्रमशः वर्तमान और ऐतिहासिक होता है। “एक उपलब्धि के रूप में हम उसे मानवीय संस्कृति कहते हैं जिसका सार्वभौम उपयोग स्वीकार हो सकता है और जिसकी विषयवस्तु सत्ता के वे पहलू हैं जो निर्वैयक्तिक रूप में अर्थवान हैं।’’[4]

तुलसीदास ने राम को रसिक रूप में भी चित्रित किया है। गीतावली में वे झूला झूलते हैं और फाग खेलते हैं उस समय का चित्र भी देखते बनता है-

‘‘अति मचत छूटत कुटिल कच, छवि अधिक सुन्दर पावहीं।

पट उड़त भूषन खसत, हँसि-हँसि अपर सखी झुलावहीं।’’[5]

स्त्रियाँ गाली दे रही हैं और राम हँस रहे हैं। क्या यह दृश्य रीतिकालीन कवियों की सीमा तक पहुँचता नहीं दिखाई देता है ? सूर्पणखा प्रसंग में भी राम का कहना है कि मैं तो विवाहित हूँ लेकिन मेरा छोटा भाई लक्ष्मण अविवाहित है। क्या झूठ बोलना उचित माना जाएगा , उधर लक्ष्मण भी यह बात नहीं कहते हैं कि मेरा विवाह हो चुका है। वे भी उसे कहते हैं-

‘‘सुन्दरि सुनु मैं उन कर दासा। पराधीन नहिं तोर सुरासा।

प्रभु समर्थ कौसलपुर राजा। जो कछु करहिं उतहिं सब छाजा।’’[6]

इस प्रकार दोनों भाई शूर्पणखा को खिलौना समझकर विशिष्ट रस की प्राप्ति करते हैं, वहीं लक्ष्मण उसकी नाक और कान तक काट लेते हैं नारी को कुरूप कर देना आखिर कहाँ की मर्यादा है ? बालि, विभीषण और सुग्रीव तीनों पर ही यह आक्षेप है कि उन्होनें अपने भाईयों की पत्नी को स्वीकार किया फिर इसमें बालिका ही वध क्यों? तुलसीदास ने ही राम के इस परत पातपूर्ण आचरण का उल्लेख किया है-

‘‘जेहि अध बंधेउ व्याघ जिमि, बाली फिर सुकंठ सोइ किन्हिं कुचाली।

सोई करतूति विभीषण केरी सपनेहु सो न राम हिय हेरी।।’’[7]

भरत जैसे व्यक्ति जिनके चरित्र को आदर्श माना गया है अपनी माता से जो

व्यवहार करते हैं, उसे कौन सी मर्यादा की सीमा में समेटा जा सकता है ?

‘‘वर माँगत मन भइ नहिं पीरा। गरि नजीह मुख परेउ न कीरा।’’[8]

इसी प्रकार मंथरा के साथ भरत का व्यवहार शत्रुघ्न का उसे लात मारना, चोटी पकड़कर घसीटना, क्या यह सब राम जैसे शिष्टाचारी पुरूष के परिवार की मर्यादा के अनुकूल था?

तुलसीदास का जीवनकाल हुमायूँ, शेरशाह एवं अकबर के शासन काल से ही संबंद्ध रहा है। उस समय भारत पर अफगानों और मुगलों का ही शासन काल था। यवनों का यह आधिपत्य महमूद गजनवी से प्रारम्भ हुआ और बलबन,

अलाउद्दीन, फिरोजशाह, तुगलक, तैमूरलंग, सिकन्दर लोदी व बाबर के शासन काल से अकबर के शासनकाल तक पहुँचा। इसी युग में मंदिरों का ध्वंस ग्रामों व नगरों का विनाश हुआ और संस्कारों की भ्रष्टता चरम सीमा पर पहुँच रही थी। समाज के सामनें किसी तरह का कोई ऊँचा आदर्श नहीं था। सारा का सारा देश विश्रृंखल और विच्छिल लक्ष्यहीन एवं विवेक भ्रष्ट हो रहा था। इतिहास शक्तियाँ अपने आतंक के विस्तार के लिए तथा जातीय संस्कृति के विनाश हेतु सन्नद्ध थी। आए दिन हिन्दू ललनाओं का सतीत्व नष्ट किया जा रहा था। धर्म आतंरिक वस्तु न होकर दर्शन श्री वस्तु वनता जा रहा था। उच्च वर्ग, के लोग अपनी झूटी शान से लिप्त रहकर अपनी विलासिता से ही निमग्न रहत थे। कबि लोग इनकी इसी विलासिता श्री प्रशंसा जिया करत थे। ऐसी परिस्थितियों से भारतीय सन्ती ने भक्ति आन्दोल्ल के द्वारा भारत के भयंकर सांस्कृतिक हास का प्रत्तिर्रस्थ्य कर धर्म साधना को लोकबादी परिणति दो माध्यम से भारतीय जनमानस को आस्था एबं विइवत्स का रक्षा कवच प्रदान जिया । गंश्र्ववम्मी तुलसीदास का स्थान मध्यकालीन भक्ति आदोलन की द्दष्टि से उनर्क अक्षुष्ण सांस्कृतिक प्रतिदान के विचार रवै भी अद्वितीय है।

रामचरित मानस दो माध्यम से भगवान राम की शील शक्ति सौन्दर्य के सगुण आराध्य दो रूप से भक्ति साधना तुलसीदास ने मूछिंत जातीय जीवन से सजीवन सचेतना का रनंचार जिया 1 ज्ञान, भक्ति और कर्म से समन्वित्त आध्यात्मिक आते दो तेज रवै प्राज्वल्यमान तुलसी श्री साधना ने मिश्रित भारतीय संस्कृति को आत्मगौरव प्रदान कर पुनजीर्बित और सम्पन्ग कर उसे सर्च शक्तिमान बनाया है। उसी द्वारा निरूपित एवं प्रतिपादित इस वैष्णव सरकुति का स्वरूप विश्लेषण करते हुए डॉ० रामरतन भटनागर ने लिखा है वैष्णव सश्स्कूति से डेत्त और अहैत का समाधान साधना भागवत और आध्यात्म ही उसका हृदय है 1 पुरातन विभिन्न साधमाऐं बिभिन्न सम्प्रदायों से भिन्न-भिन्ग रूप धारण करकं ही उदित हुई है।''

तुलसीदास द्वारा रचित रामचरित माना बिनय पत्रिका, और दोहावली तीनों ही जनचेतना श्री वृहत्रयी माना जाता है। तुलसीदास श्री जूतियों से युग जीवन और युगीन परिस्थितियों का उदभव हुआ है। इन तीनों से मानवीय सस्कूति मूल्यों की परिपूर्णतश्चप्त चेतना की अनायास सिद्धि करती है। रामचरित मानस तुलसीदास का सुद्दढ कीर्ति स्तम्भ माना जात्ता है इसी के यल पर वे भारत के ही नहीं अपितु संसार के सर्वश्रेष्ठ और महान कवियों से गिने जाते हैं। जॉर्ज ग्रियर्सन ने इनकी लोकप्रियता देखते ही इन्हें बुद्धदेव के बाद सबसे बजा लोकनायक कहा था और आचार्य हजत्सी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार यह तो बहुत लोगों क मुख से सुना गया है कि इतकी रामायण उत्वर भारत का ब्बहृनबिल है। हिन्दी के कुछ क्रांतिकारी लेखक तुलसीदास के ब्रह्माण्ड समर्थक और शूद्र तथा नारी विरोधी विचारों के कारण उनके लिए अमर्यादित शब्दों का प्रयोग करते हैं।

साहित्य मनुष्य जीवन के भूल एबं घर्त्तमत्न का प्रस्तुत करने चाला सबसे रायल माध्यम है साथ ही यह भविष्य की और भी सश्कंत करता चलता है । जीवन से संबध्द होने के कारण इसका क्षेत्र भी विशाल है र्जत्वन के विविध पक्षों समस्याओं का जिया साहित्य श्री विविध विधाओं द्वारा जिया जा रहा है । साहित्य जीवन की उलझनों का सुलझाने का प्रयत्न भी मिलता हैं 1 जीवन का सरसता से, रंश्चिता ले आकर्षक रूप में किन्तु यथार्थ के साथ उसका चित्रण करने का प्रयत्न भी साहित्य में ही होता है। तुलसीदास जी चित्रकूट के पावन घन से अपनी आतश्येडस्ना के माध्यम से नए प्रकाश का दर्शन भी कस्ते हैं। उनकी साहित्य साधना और भगवान राम दो गुणगान का आधार मिलने बाला बिचंम्पत्स्यना श्री प्रतिभा मानी भारतीय संस्कृति पर फैली हुई मानस तरण, शब्द जल, तैरता, डूबना, ऊपर उतना नीचे उतरना, आकाश से गति इत्यादि राय कुछ सकतीं से व्यक्त हुआ है ।

''भरे भाग अनुराग लोग कहैं, राम अवध चित्त्वन चितइं हैं।

राम राज भयो काज शगुन सुभ राजा राम जगत जिन्हें हैं।

समरथ बडो सुजान सुसेर्पहत सुकृत सेन्य हारत्त जितईं हैं
।।''9

गोस्वामी तुलसीदास हिन्दी साहित्य के पूर्व मध्यकाल के एक ऐसे कवि हैं जिनके कवि व्यवितत्व का शीर्षस्थ स्थान पर प्रतिष्ठित जिया गया है । तुलसीदास की इस लीक प्रियता का आधार है उनकी रचनाएँ, जिनसे अकले रामचरित मानसे ने भारत की कॉटि-कॉटि जनता को युगों तक परिचालित जिया है। तुलसीदास द्धारा रचित रामचरित मानस एक ऐसा महाकाव्य है जिसेमें काव्य कं सुधी मर्मज्ञों से लेकर सर्व साधारण भक्त तक रागी का कुछ न कुछ आनन्द क्री परितृप्ति का अक्सर मिल ही जाता है। शास्त्र से लेकर धर्म तक और सेदाचार तक इसमें समाहित हैं। वास्तविकता तो यह हैं जि मानस ठी तुलसीदास जी श्री एक ऐसी सामप्रत्यात्त्वत्रु कृति है जिस अकली रचना के यल पर वे महाकवि के आसन पर प्रतिष्ठित किए जा सकते है। मानव र्जत्वन के उत्थान से जीवन मूल्यों का विशेष महत्व होता है

जीवन मूल्य ठी इस सेनाज से प्रवाहमान होते है। साहित्यकार समाज का संवेदनर्शम्ल, विवेकशील व्यक्ति होने क कारण अपने युग के समस्त जिया कलापों एबं युग चतना से अवश्य प्रभावित होता है युग चेता साहित्यकार अपने समाज कं विकास के लिए ही सदैव प्रक्खिद्ध होता है यह अपने साहित्य से युग यथार्थ के साथ अपनी कल्पना का सेमीक्षण करक आदर्श रचना श्री निर्मिति करता है इसलिए उसकी दृष्टि कालबद्दद और कालातीत होती है। युग चेत रचनाकार अपने फराज का पथ प्रदर्शक तो होता ठी हैं साथ ही साथ वह भविष्य का भी आलोकित करता है।

गोस्वामी तुलसीदास ने स्वान्त सुखाय के साथ पश्चात हिताय को भी स्वीकार जिया है अत्तरू जहा त्तक प्रथम स्थिति का प्रश्न है तो वे इस जग का कल्याण इस तरह की विषम स्थितियों परिस्थितियों को ही मानते हैं। हमारी यह स्पष्टतरू मान्यता है जि बागी भी भक्त पर विकारी का प्रभाव नही पता है अत्तरू उसका आचरण स्वत जल पर जिले कमल के समान ठी रहता है भवित हमेशा स्वान्तरू सुखाय और जक्मक्लकारो दोनों है। तुलसीदास जी ने इसी से पान कृपा का गान जिया और उसकं माध्यम से औचित्य और मर्यादा स्थापित करने का प्रयत्न करते हैं भक्ति के आवेग सहित पान कथा का गान उसका स्वान्तरू सुखाय पक्ष ही है। अत्तरू गोस्वामी तुलसीदास दो काव्य में नैसर्गिक भाबोदेक के राथ शिव भी समाहित रहते हैं। पात्रों के चरित्र और व्यवहार के माध्यम से तुलसीदास के व्यचित्स्यत्त मर्यादावत्व की यह विशेषता है जि वे जिवन परिस्थितियों में भी मर्यादित रहते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. गोस्वामी तुलसीदास के साहित्य का विशेष मुहायन, भगीरथ मिश्र- पृष्ठ संख्या 77

2. विनय पत्रिका-गोस्वामी तुलसीदास- पृ॰-109-110

3. रामचरित मानस३ गोस्वामी तुलसीदास महाभारत अनुशासन पर्व- 115,124

4. कला और संस्कृति३ डॉ॰ बासुदेव शक्या अग्रवाल पृष्ठ संख्या-21

5. निराला काव्य और व्यक्तित्व, डॉ0 धनंजय वर्मा पृष्ठ संख्या - 38

6. नई कविता में वैयक्तिक चेतना, डॉ॰ अवध नारायण तिवारी पृष्ठ संख्या- 27

7. साहित्य या आधार दर्शन-जयनाथ नलिन (1967) पृष्ठ सफुया-01

8. वही पृष्ठ संख्या- 42

9. आस्था दो चरण- डॉ॰ नगेन्द्र लिप्त पृष्ठ संख्या-391-393

Corresponding Author

Dr. Pradeep Kumar Singh*

President-Hindi Department, Sathaye College (Mumbai Vidyapeeth) Mumbai-Maharashtra